प्रथम अवस्था में एक चक्र के घेरे से पात्र जुड़े रहते थे जिसे सतही जल के स्रोत पर लगाया जाता था; ज्यों ही यह पहिया घुमाया जाता था, ये पात्र निरंतर प्रक्रिया में पानी भरते थे और उड़ेलते थे। उक्त यंत्र की यही प्रथम अवस्था थी जिसे अंग्रेजी में 'नोरिया' कहते हैं।

दूसरी अवस्था में, ये पात्र पहिए के घेरे से नहीं बल्कि एक लम्बे रस्से से जुड़े रहते थे जिसको फिर एक जंजीर के रूप में प्रयोग किया जाता था और जिसे पहिए पर एक हार की तरह टाँग दिया जाता था। पात्रों वाली यह रस्सा-जंजीर सटीक रूप से 'पात्र-माला' कही जा सकती है। जब जल-चक्र को किसी कुँए पर उपयुक्त ऊँचाई पर रखा जाता था तो लटकती पात्र-माला के तले वाले पात्र कुँए के जल में डूबे रहते थे। चक्र को घुमाकर इस प्रकार अब सिंचाई और अन्य प्रयोजनों हेतु कुँए का कुशलतापूर्वक प्रयोग करना संभव था।

अरघट्टा के इतिहास में यह दूसरी अवस्था न सिर्फ़ प्रारम्भिक भारत के साहित्य में (उदाहरणार्थ, *पंचतंत्र* में) बल्कि दक्षिणी राजस्थान और गुजरात के प्रारंभिक मध्यकालीन अभिलेखों में भी व्यापक रूप से प्रमाणित होती है। कुँओं पर ये *अरघट्ट* या तो हाथ द्वारा या फिर पैर द्वारा शारीरिक श्रम से चलाए जाते थे। जब उन्हें गियर पद्धति द्वारा पशु शक्ति से चलाया जाने लगा तो यह जल-चक्र अपनी तीसरी अवस्था में पहुँच चुका था। इसका विशद वर्णन *बाबरनामा* में किया गया है। दसवीं शताब्दी के भारत में इसकी विद्यमानता का एक अस्पष्ट दावा हबीब द्वारा झुठलाया गया, और इस खंडन का प्रतिवाद अभी तक नहीं किया गया है।

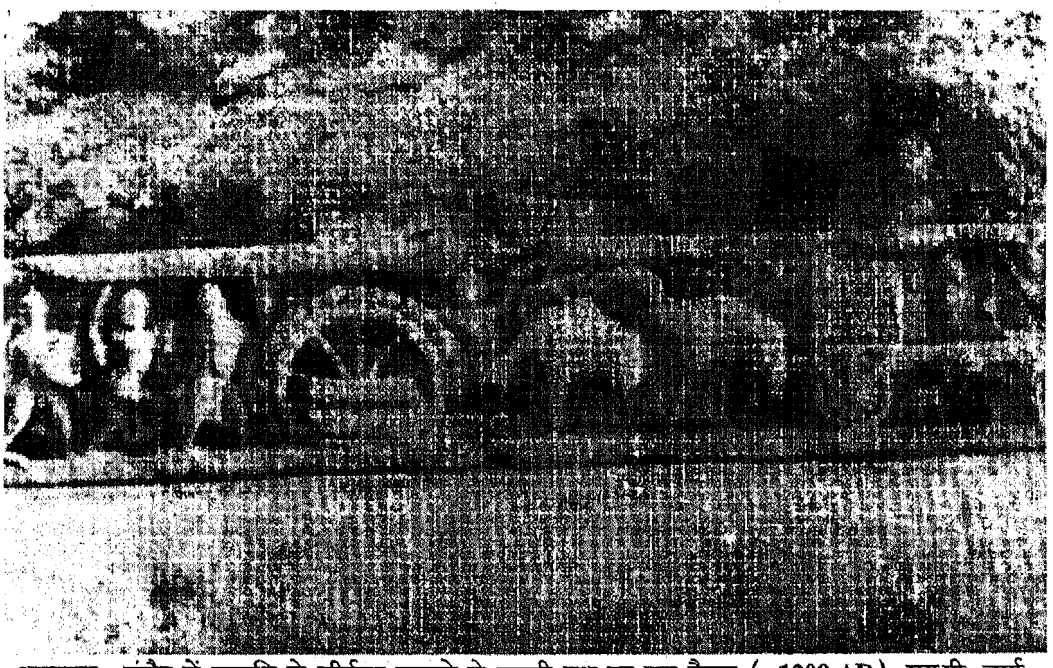

***अरघट्टा* : मंदौर में समाधि के शीर्षस्थ चबूतरे के उत्तरी पक्ष का एक पैनल (*c.*1200 AD), एस.पी. वर्मा, *इंडिया ऐट वर्क इन स्कल्पचर एंड पेंटिंग*, अलीगढ़, 1994.**

विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त अभिलेखों में कुँओं और तालाबों के संदर्भ काफ़ी संख्या में मिलते हैं। गुजरात से खास तौर पर विशेष प्रकार के सीढ़ीदार बड़े कुँओं के अच्छे पुरालेखीय प्रमाण मिलते हैं, जिन्हें *वापी* या सीढ़ीदार-कुँए कहा जाता है। ये सभी कुँए, तालाब, आदि फसलों की सिंचाई में ही प्रयोग नहीं किए जाते थे, जैसा कि इतिहासकार प्राय: बिना किसी जाँच के बड़ी आसानी से मान लिया करते हैं। वे सभी *वापियाँ* जिनका उल्लेख पुराशास्त्रीय अभिलेखों में मिलता है, को इस प्रकार कृषि सिंचाई का साधन माना जाता था, कई अवसरों पर *वापी* का *अनुवाद* 'एक सिंचाई कूप' के रूप में भी किया जाता था, जैसा कि गुजरात के एक मैत्रक शासक के अभिलेख में अनुदित है। (*ऐपिग्राफिया इंडिका*, XI, पृ. 108) हालाँकि ग़ैर-कृषि उद्देश्यों से काम कर रही *वापियाँ* सुविदित हैं। इसी प्रकार, यह सोचना ग़लत होगा कि मालवा की विशाल भोजपुर झील कृषि उत्पादन के विस्तार के लिए बनवाई गई थी।